वृष्टियज्ञ की महिमा एवं प्रमाणिता

स्वामी यज्ञदेव | पतंजलि संयासाश्रम
पतंजलि योगपीठ, हरिद्वार

सृष्टि के जीवन का आधार जल ही है। जगत् में जल की प्राप्ति के अनेक स्रोत हैं, जिनमें सबसे प्रमुख वर्षा है। यह वर्षा हमें पर्जन्य से प्राप्त होती है। किन्तु यह वर्षा प्रकृति के नियमों के अन्तर्गत ही हमें प्राप्त होती है या कोई अन्य मार्ग या उपाय भी है। इस का उत्तर हमें वेद देता है-

निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु।[1]

अर्थात् जब-जब हम चाहें तब-तब मेघ बरसें और वर्षा हो। वेदों में ऐसे अनेक मन्त्र आएं हैं, जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हम अपनी इच्छा अनुसार भी वर्षा करा सकते हैं। किन्तु मात्र इच्छा से ही नहीं इसके लिए हमें कुछ प्रयत्न भी करना होगा, कुछ प्रयोग भी करने होंगे और वह प्रयोग है- यज्ञ। यज्ञ द्वारा हम वर्षा करा सकते हैं अर्थात् यज्ञ में ऐसी शक्ति है जो बादलों का निर्माण कराकर वर्षा करा सकती है। इसीलिए अथर्ववेद में कहा गया है-

तन्तता यज्ञं बहुधा विसृष्टा।[2]

अर्थात् जब वर्षा कराने की आवश्यकता हो तो विविध प्रकार के यज्ञ करने चाहिए।

एतान्यग्ने नवतिर्नव त्वे य आहुतान्यधिरथा सहस्रा।
तेभिर्वर्धस्व तन्वः शूर पूर्वीर्दिवो नो वृष्टिमिषितो रिरीहि।।[3]

अग्नि में 99 सहस्र घृत सहित चरू की आहुति देने से अग्नि अनेक ज्वालाओं से बढ़ती है। वह तीव्र होकर आकाश से वृष्टि प्राप्त कराती है।[4]

ऋग्वेद के सूक्तगत मन्त्रों के अर्थों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वेद के अनुसार वृष्टियज्ञ द्वारा वर्षा करायी जा सकती है। अनावृष्टिकाल में सबका कल्याण वर्षा द्वारा ही संभव है, अतः ऐसे समय राजा को वृष्टियज्ञों का आयोजन करना चाहिये।[5]

अथर्ववेद में पर्जन्य (बादलों) को हमारा पिता कहा है-

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु।[6]

अर्थात् भूमि हमारी माता है और हम पृथिवी के पुत्र और वर्षा द्वारा सब कुछ उत्पन्न करने वाल पर्जन्य हमारा पिता है।

यजुर्वेद में कामना की गई है कि-

शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु।[7]

अर्थात् दिव्य बादल गरज व बिजली के साथ हमारे लिए कल्याणप्रद

वर्षा सब ओर से करें। यास्कीय निरुक्त निर्वचनपूर्वक पर्जन्य महत्व का दिग्दर्शन कराया गया है-

पर्जन्यः पर उत्कृष्टो जनयिता औषधि वनस्पतीनाम्।[8]

अर्थात् औषधि, वनस्पतियों का उत्पन्नकर्ता पर्जन्य ही उत्कृष्ट है। पर्जन्य का जन्म ही परज़न्य अर्थात् दूसरों के लिए हैं।

निरुक्तकार यज्ञ की व्याख्या करते हुए कहते हैं-

येन सदनुष्ठानेन इन्द्रप्रभृतयो देवाः सुप्रसन्नाः सुवृष्टिं कुर्युस्तद् यज्ञपदाभिधेयम्।[9]

अर्थात् जिस उत्तम अनुष्ठान से सूर्यादि देवतागण अनुकूल वृष्टि करें, उसे यज्ञ कहते हैं।

ऋग्वेद के सोमाहुतिर्भार्गव ऋषि तथा अग्नि देवता वाले मन्त्र में कामना की गई है-

स नो वृष्टिं दिवस्परि स नो वाजमनर्वाणम्। स नः सहस्रिणीरिषः।।[10]

अर्थात् यह यज्ञ (अग्नि) हम लोगों के लिए सूर्यप्रकाश तथा मेघमण्डल से वर्षा कराता है। पर यज्ञ से कैसे करें?

घृतं पवस्व धारया यज्ञेषु देववीतमः। अस्मभ्यं वृष्टिमा पव।।[11]

वर्षा के लिए घृत की धारा टपकाएं।

यजुर्वेद के 1/16 मन्त्र में यज्ञ को वर्षावृद्धम् कहा गया है। अर्थात् वर्षा को बढ़ाने वाला कहा गया है।

सामवेद में भी यज्ञ को वृष्टि का साधन माना है-

अयन्त इन्द्रो सोमो निपूतो अधि बर्हिषि एहमस्य द्रवा पिब।[12]

अर्थात् जब मनुष्य वृष्टि के हेतु इन्द्रयाग के लिए सोम को तैयार करें तब परमेश्वर की स्तुति करके अग्नि में सोम का हवन करें, जिससे इन्द्र नामक अग्नि दौड़ जावे और सोम का पानकर वर्षा का हेतु हो। अर्थात् यज्ञ की प्रचण्ड अग्नि से मेघ तैयार होता है और घने मेघों से वर्षा।

आ ते सुपर्णा अमिनन्तं एवैः कृष्णो नोनाव वृषभो यदीदम्।
शिवाभिर्न स्मयमानाभिरागात् पतन्ति मिहः स्तनयन्त्यभ्रा।।[13]

अर्थात् हे अग्ने! जब मेरी उत्तम शक्तियां सब ओर से मेघ पर आघात करती हैं, तब काले रंग का बरसने वाला बादल इधर की ओर झुकता है। वह शान्तिदायक मुस्कुराती हुई बिजलियों से युक्त हो जाता है, फिर मेघ गरजते हैं और मेघ बरसता है।

वेदों में ही नहीं मनुस्मृति में भी यज्ञ को वर्षा का मुख्य कारण माना गया है-

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यग् आदित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः।।[14]

अर्थात् आहवनीय अग्नि में यथाविधि जो आहुति दी जाती है, वह द्युलोकस्थ आदित्य को प्राप्त हो जाती है। जिसके फलस्वरूप सूर्य वृष्टि करते हैं। श्रीमद्भगवद् गीता में भी कहा गया है-

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः।।[15]

अर्थात् यज्ञ से मेघ बनते हैं, मेघ से वर्षा होती है और वर्षा से अन्न की उत्पत्ति होती है।

यज्ञ द्वारा वर्षा सम्भव है यह बात मात्र वेद, उपनिषद, ब्राह्मणग्रन्थ, मनुस्मृति व गीता आदि में ही वर्णित नहीं है, इसके अचूक प्रयोग भी हो चुके हैं। यह कोई कोरी कल्पना नहीं है, बल्कि इसे विद्वानों ने प्रक्रियात्मक रूप भी दिया है। जगह-जगह ऐसे अनेक वृष्टि यज्ञ कराए गए और वे सफल भी हुए। यज्ञ के द्वारा बादलों को बरसाया ही नहीं जाता, अपितु बादलों का निर्माण भी किया जाता है। अतः यदि आकाश मेघाच्छादित न हो तो भी वर्षा की जा सकती है। किन्तु ये समस्त क्रियाएं अग्नि के बिना सम्भव नहीं हैं। **व्रजं गच्छ गोष्ठानं वर्षतु**[16] का यह वाक्य स्पष्ट करता है कि जिस यज्ञ का हम अनुष्ठान करते हैं, वे मेघमण्डल में जाकर पृथिवी के स्थान विशेष पर वर्षा करते हैं।

वृष्टि यज्ञ के प्रयोग

1. वेद विज्ञानाचार्य पं. वीरसेन वेदश्रमीजी (इन्दौर, म.प्र.) लिखते हैं- वृष्टियज्ञ कराने के लगभग 25 परीक्षण मेरे द्वारा सम्पन्न हुए हैं। अन्य भी अनेक व्यक्तियों ने यज्ञ किए हैं, उनमें भी पूर्ण रूप से या आंशिक सफलता अवश्य हुई है।
2. आर्य जगत सार्वदेशिक नई दिल्ली के 25.10.87 के अंक में, श्री रमेश मुनि वानप्रस्थी जी ने 'वृष्टि महायज्ञ की सही पद्धति' नामक लेख लिखा था, जिसमें उन्होंने बतलाया 21.8.87 से 27.8.87 तक उन्होंने आर्य समाज, आदर्शनगर, जयपुर में वृष्टियज्ञ कराया था, जिससे वहां घनघोर वर्षा हुई।
3. 1973 में आर्य समाज नागोरी गेट, हिसार के प्रांगण में स्वामी अग्निदेव भीष्म जी के सान्निध्य में वृष्टि यज्ञ का सफल आयोजन हुआ।
4. डॉ0 कमलनारायण आर्य, वैदिक पर्यावरणविद्, रायपुर में अपने जीवनकाल में अब तक 25 वृष्टियज्ञ कराए हैं। वृष्टियज्ञ का कार्य अभी भी चल रहा है, उनकी यह विद्या अनुकरणीय है।

वृष्टियज्ञ सम्बन्धी महर्षि दयानन्द जी के विचार-

1. जो होत्र करने के द्रव्य अग्नि में डाले जाते हैं, उनसे धुआं और भाप उत्पन्न होते हैं- वे परमाणु मेघमण्डल में वायु के आधार पर रहते हैं, फिर वे परस्पर बादल होके उनसे वृष्टि, वृष्टि से औषधि, औषधियों से अन्न, अन्न से धातु, धातुओं से शरीर बनता है।[17]
2. वे ही मनुष्य उत्तम दाता हैं, जो यज्ञ द्वारा जंगलों की रक्षा और जलाशयों के निर्माण से बहुत वर्षाओं को कराते हैं।
3. जो वृष्टि कराने वाले वायु और अग्नि आदि को विशेष करके

जानते हैं, वे इनको वृष्टि करने के लिए प्रेरणा करने में समर्थ होते हैं।

4. मनुष्य लोगों को चाहिए कि जिस मेघ से सबका पालन होता है, उसकी वृद्धि वृक्षों के लगाने, वनों की रक्षा करने और होत्र करने से सिद्ध करें जिससे सबका पालन सुख से होवे।
5. वर्षा का हेतु जो यज्ञ है, उसका अनुष्ठान करके नाना प्रकार के सुख उत्पन्न करना चाहिए। क्योंकि यज्ञ के करने से वायु और वृष्टि जल की शुद्धि द्वारा संसार में अत्यन्त सुख सिद्ध होता है।
6. मनुष्य को अपने विज्ञान से अच्छी प्रकार पदार्थों को इकट्ठा करके उससे यज्ञ का अनुष्ठान करना चाहिए, जो कि वृष्टि को बढ़ाने वाला है।
7. ब्रह्मचर्य आदि अनुष्ठानों में किये हुए हवन आदि से पवन और वर्षाजल की शुद्धि होती है, उससे शुद्ध जल की वर्षा होती है, जिससे भूमि पर जो उत्पन्न हुए जीव हैं, वे तृप्त होते हैं।
8. जब विद्वान् जन सुगन्धत्यादि पदार्थों के होत्र से जलों की शुद्धि कराते हैं, तब प्रशंसा को प्राप्त होते हैं।
9. सुगन्धित द्रव्य के परमाणुओं से युक्त वायु होम द्वारा आकाश में चढ़कर वृष्टि करवाती है। यज्ञ से अन्तरिक्ष में वाष्प भार की वृद्धि होती है, जो वर्षा का कारण बनती है। अर्थात् जब वृष्टियज्ञ कराया जाता है, तब उसमें वृष्टि करवाने वाली औषधियों को डाला जाता है, तो वे अपने साथ जल वाष्प को भी ले जाती हैं। यह वाष्प और गैस ऊपर जाकर बादल बन जाते हैं और पहले से विद्यमान बादलों में समाने लगते हैं। जिससे उनके भार में वृद्धि होने लगती है, यही वृद्धि वर्षा का कारण बनती है।

वृष्टि यज्ञ सम्बन्धी महर्षि दयानन्द जी के पत्र

पहला पत्र– 10-15 अगस्त 1883 को उदयपुर के महाराजा सज्जनसिंह को लिखा- 'आरोग्य और अधिक वर्षा के लिए एक वर्ष में 10,000/- रुपये के घृतादि का जिस रीति से होत्र हुआ था, उसी रीति से प्रतिवर्ष कराइए। चारों वेदों के ब्राह्मण का वरण कर एक सुपरीक्षित धार्मिक पुरुष उन पर रख के होत्र कराइयेगा।

दूसरा पत्र– 8 सितम्बर 1883 को श्रीमद्राज राजेश्वर, जोधपुर नरेश को लिखा गया- वर्षा प्रायः न्यून होती है, इसके लिए 10,000/- रुपये का घृतादि का नित्यप्रति और वर्षाकाल में चार महीने तक अधिक होत्र कराइएगा। वैसा प्रतिवर्ष होता रहे तो सम्भव है कि देश में रोग न्यून और वर्षा अधिक हुआ करे।[18]

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने यजुर्वेद भाष्य तथा स्वरचित अन्य ग्रन्थों में यज्ञ के चार गुणयुक्त हविर्द्रव्य बनाने का उल्लेख किया है।

यथा- **अग्निहोत्रमारभ्याश्वमेधपर्यन्तेषु यज्ञेषु सुगन्धिमिष्टपुष्ट-रोगनाशकगुणैर्युक्तस्य सम्यक् संस्कारेण शोधितस्य द्रव्यस्य वायुवृष्टिजलशुद्धिकरणार्थमग्नौ होमो क्रियते, स तद्द्वारा सर्वजगत् सुखकार्येव भवति।**

अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त जो कर्मकाण्ड हैं, उसमें चार प्रकार के गुणयुक्त द्रव्यों का होम करना होता है।

वे निम्न हैं- प्रथम- **सुगन्धित** कस्तूरी, केशर, अगर, तगर, श्वेत चन्दन, इलायची, जायफल, जावित्री आदि। द्वितीय- **पुष्टिकारक** घृत, दूध, फल, कन्द, अन्न, चावल, गेहूँ, उड़द आदि। तीसरे- **मिष्ट** शक्कर, शहद, छुआरे, दाख आदि। चौथे- **रोगनाशक** सोमलता अर्थात् गिलोय आदि औषधियाँ।

केशर-कस्तूरी आदि **सुगन्ध**, घृत-दुग्ध आदि पुष्ट, गुड़-शर्करा आदि मिष्ट तथा सोमलतादि औषधि **रोगनाशक**- ये जो चार प्रकार के **बुद्धिवृद्धि, शूरता, धीरता, बल और आरोग्य** करने वाले गुणों से युक्त पदार्थ हैं, उनका होम करने से पवन और वर्षाजल की शुद्धि करके शुद्ध पवन और जल के योग से पृथिवी के सब पदार्थों की जो अत्यन्त उत्तमता होती है, उससे सब जीवों को परम सुख होता है। इस कारण उस अग्निहोत्र-कर्म करने वाले मनुष्यों को भी जीवों के उपकार करने से अत्यन्त सुख का लाभ होता है तथा ईश्वर भी इन मनुष्यों पर प्रसन्न होता है। ऐसे प्रयोजनों के अर्थ अग्निहोत्रादि का करना अत्यन्त उचित है।[19]

---

1. यजुर्वेद- 22.22
2. अथर्ववेद- 4.15.16
3. ऋग्वेद- 10.98.10
4. अध्यात्म सुधा- 4, स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वती, पृष्ठ- 289
5. आर्ष ज्योति, डॉ. रामनाथ वेदालंकार, पृष्ठ- 237 में ऋग्वेद- 10.98 पर विचार
6. अथर्ववेद- 12.1.12
7. यजुर्वेद- 36.10
8. यास्क निरुक्त- 10.12
9. यज्ञ मीमांसा
10. ऋग्वेद- 2.6.5
11. ऋग्वेद- 9.49.3
12. सामवेद- 159
13. ऋग्वेद- 1.79.2
14. मनुस्मृति- 3.76
15. गीता- 3.14
16. यजुर्वेद- 1.25
17. ऋग्वेदादि (भाष्य) भूमिका वेद विषय विचार
18. साभार दयानन्द के पत्र एवं विज्ञापन द्वारा रामलाल कपूर ट्रस्ट
19. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पृष्ठ-44, यजु-भाष्य-3.1, 19.21, संस्कारविधि सामान्य प्रकरण पृष्ठ-37